शांतिकुंज महातीर्थ की कथा

अखंड ज्योति अगस्त 1990 पृष्ठ 48

शांतिकुंज महातीर्थ की कथा - अखंड ज्योति अगस्त 1990 पृष्ठ 48

पूज्य गुरुदेव शांतिकुंज के लिए जमीन तलाश रहे थे। 1968 के दिन थे उन्हीं दिनों पास की प्रायः सभी जमीनों को देखते , परखते एक स्थान पर आ कर ठहर गए। पास में कुछ और भी लोग खड़े थे जो देखे गए भूखंडों की अनुमानित कीमतें विविध दृष्टिकोणों से उन्हें विशेषताएं बता रहे थे। पता नहीं इस बातचीत ने गुरुदेव के कानों में प्रवेश किया या नहीं। वह यथावत खड़े जैसे अविज्ञात की किन्हीं रहस्यमयी तरंगों को पकड़ रहे हो। मुखमंडल में किसी तरह की प्रतिक्रिया का कोई चिह्न नहीं उभरा। अचानक उन्होंने अपनी धोती

समेटी और सामने खड़े भूखण्ड का एक चक्कर लगाया। एक सन्तोष की रेखा झलकी मानो खोज पूरी हुई।

“मुझे यह जमीन खरीदनी है, बात चलाओ।"

"यह?" एक शब्द के उच्चारण के साथ सभी के चेहरे पर आश्चर्य घनीभूत हो उठा। सामान्य तौर पर यह उचित भी था। घुटनों से भी गहरा दलदल, छाती तक बड़ी घास, यातायात की असुविधा, ऐसी जगह को खरीदने का सोचना कम से कम बुद्धिमत्ता की दृष्टि से तो कतई ठीक नहीं।

“हाँ, यही।” उनका जवाब था जो शायद बुद्धि की सीमाओं से अछूते किसी क्षेत्र से उभरा था। पर यहाँ की दलदली भूमि में न तो मकान बन सकेंगे,कीमतें भी

ज्यादा हैं, प्राय: सभी ने अपनी अक्ल की सीमाओं को छूते हुए अपने-अपने तर्क प्रस्तुत किये।

गुरुदेव के मन में अध्यात्म की एक जीती जागती लेबोरेटरी बनाने की योजना उतरी थी। एक ऐसी लेबोरेटरी जहाँ मानव की आंतरिक संरचना में फेर बदल किया जा सके, उसकी अंतःशक्तियों को जगाया-निखारा जा सके। समाज के लिए लोकसेवियों को गढ़ना, नवयुग को मूर्त करना भी महत्वपूर्ण उद्देश्य थे। ये सभी कल्पनाएं जहाँ से मूर्त हो सके ऐसी कार्यशाला हर स्थान पर तो नहीं बन सकती, सहयोगियों के अपने तर्क थे।

कुछ वैसी ही स्थिति श्री अरविन्द के सामने चन्द्रनगर से पाण्डिचेरी प्रस्थान करते समय आ पड़ी थी। उनके

समक्ष भी सहयोगियों के सुझाव थे, तप करने के लिए वहीं क्यो? फ्रांस शासित दूरस्थ प्रदेश की यात्रा की कठिनाइयाँ, स्वजनो का विछोह। एकान्तवास तो कहीं भी किया जा सकता है, फिर स्थान विशेष का आग्रह किसलिए। श्री अरविन्द का जवाब था भगवान गुरु का आदेश है,तुम लोग बाद में देखोगे, समझोगे। इस कथन के सम्मुख सभी तर्क मौन हो गये। बाद में रहस्य उद्घाटित हुआ कि पाण्डिचेरी तपस्वी महर्षि अगस्त्य की तपस्थली थी, अध्यात्म की सम्पदाओं को स्वयं में संजोये स्थान था। यह इन प्रचण्ड संस्कारों वाली भूमि के अलावा अतिमानस की प्रयोगशाला और कहाँ स्थापित होती?

इस बार भी जवाब यही था गुरु का आदेश है। दिव्यसत्ता ने इसी स्थान के बारे में निर्देशित किया है। तुम लोग बाद में देखोगे समझोगे। सभी तर्क शिथिल हो गए। आर्थिक हानि असुविधाओं का रोना धोना बेकार रहा।

सब कुछ निश्चय हो जाने पर एक दिन पूज्य गुरुदेव ने धीरे से कहा- जानते हो यह स्थान ब्रह्मर्षि विश्वामित्र की तपस्थली रही है। गंगा की सप्त धाराओ में से एक कभी इसी स्थान को सींचती रही है। सुनने वाले भौचक्के थे। प्रखर से भी प्रखर बुद्धि महायोगी के सम्मुख कितनी बौनी हो जाती है। कोई क्या बोलता? वह कह रहे थे देवदारु को रेगिस्तान में नहीं उगाया जा सकता। शुष्क स्थानों पर उगने वाली कटीली झाड़ियों, वहाँ के पशु

पक्षी हिमाद्रि में अपना अस्तित्व गंवा बैठेंगे। संसार की प्रत्येक वस्तु को अपना पूर्ण विकास करने के लिए एक निश्चित वातावरण चाहिए। आध्यात्मिकता भी इसकी अपेक्षा करती है।

अपेक्षा पूरी हुई। गंगा की गोद, हिमालय के पद प्रान्त में स्थित विश्वामित्र की तपस्थली ऋषि युग्म की दीर्घ तपश्चर्या नित्य यज्ञ. लक्षाधिक साधकों के साधनात्मक पुरुषार्थ से तीर्थ, महातीर्थ और अब युगान्तर चेतना के गोमुख के रूप में परिवर्तित हो गई। शांतिकुंज नाम से जाना जाने वाला यह दिव्य क्षेत्र सहस्राधिक वर्षों तक मानवता को नवीन प्राण देता रहेगा।

****